आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 4/अंक 3/सितंबर 2024
Received:10/09/2024; Accepted:15/09/2024; Published:26/09/2024

हिन्दी उपन्यासों में व्यक्त दलित जीवन

- डॉ.विलास अंबादास साळुंके
हिन्दी सहायक प्राध्यापक,
सरकारी प्रथम श्रेणी महाविद्यालय,सेडम

डॉ.विलास अंबादास साळुंके,**हिन्दी उपन्यासों में व्यक्त दलित जीवन** , आखर हिंदी पत्रिका, खंड 4/अंक 3/सितंबर 2024 (208-211)

भारतीय संस्कृति के धरोहर वेदों में चार प्रमुख वर्णों का उल्लेख किया गया है। यही वर्ण कालांतर में जाति के रुप में परिवर्तित होकर शोषण का कारण बनीं। वर्णव्यवस्था के सर्वोपरी स्थान के धनी वर्ग द्ववारा व्यवस्था के अंतिम पायदान पर स्थित समुदाय को हर स्तर पर शोषण होता रहा। इस शोषण को अपने पूर्व जन्मों के पाप का प्रायश्चित मानकर यह समुदाय उसे सहता रहा। शोषकों के खिलाफ आवाज उठाने से पहले वह नरक की तकलीफ देह व्यवस्था की कल्पना के चलते मूक विस्मित होकर जीवन जीने के लिए मजबूर बना। यह समाज शिक्षा,संपत्ति एवं अधिकार से वंचित होकर पशुओं से बदतर जीवन जीना इनका दुर्भाग्य बन गया था। किन्तु काल बहती नदी की तरह निरंतर परिवर्तित होता रहता है यही परिवर्तन महात्मा ज्योतिबा फूले, डॉ.बाबासाहेब अंबेडकर की बदौलत इनके जीवन में भी आया।

दलित साहित्य को परिभाषित करते हुए जय प्रकाश कर्दमम लिखते हैं-"दलित साहित्य दलितों द्ववारा लिखा गया ऐसा साहित्य है जो उन्हें अपने दमन और शोषण करनेवालों के विरुद्ध संघर्ष के लिए प्रेरित कर उनके अंदर सम्मान और स्वाभिमान से जीने की भावना पैदा करें। भाग्य,भगवान,पुनर्जन्म,परलोक आदि में विश्वास की बजाय वैज्ञानिक सोंच का विकास करें। वर्ण व्यवस्था जाति व्यवस्था सहित उन तमाम शोषणमूलक व्यवस्थाओं का विरोध करने की सीख दे, जो असमानता, अन्याय और अमानवीयता की जनक या पोषक है।"

हिन्दी दलित उपन्यासकारों में जयप्रकाश कर्दम का नाम साहित्य के क्षेत्र में बडे आदर के साथ लिया जाता है। इनमा 'छप्पर' उपन्यास दलित चिंतन की सामाजिक व्यवस्था को यथार्थ रुप में चित्रित करनेवाला समाज में मानवतावादी क्रांति के मद्देनजर लिखा गया उपन्यास है। इसमें एक दलित युवक चंदन द्वारा उच्च

शिक्षा के लिए अनेक संघर्षों से गुजरना तथा इसी संघर्ष के फलस्वरुप माँ-बाप को कई तकलिफों का सामना कर अत्याचारों को सहने का चित्रण किया गया है। इस उपन्यास में चन्दन और रजनी दो प्रमुख पात्र हैं। यह पात्र शिक्षा के माध्यम से समाज में परिवर्तन के चलते मानवीय मूल्यों के धरातल पर समाज की नींव को मजबूत बनाना चाहते हैं। इनके इस कार्य में इनके माता-पिता रमिया और सुक्खा तन-मन से इनको सहयोग देते हैं।

चन्दन शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात अपने मानवीय अधिकारों के प्रति वह सजग होकर सदियों से अन्याय अत्याचार को पूर्वजन्मों का पाप मानकर सहते आये दलित समाज में जागृति लाने की ठान लेता है। वह कहता भी है-" मैं वाणी दूँगा उनकी मूक जुबान को। पढ-लिखकर हमारे समाज के लोग ऊपर नहीं उठेंगे तो हमें कौन पूछेगा। हम थोडे से लोग चीख-चीखकर मर जायेंगे, कौन सुनेगा हमारी चीख, हमें समाज से टक्कर लेनी है, सत्ता से लढाई लडनी है। जुल्म और शोषण के विरुद्ध संघर्ष करना है, सबके लिए फौज तयार करुंगा मैं।"[1]

चंदन शिक्षा प्राप्त कर केवल अपनी परीधी तक ही सीमित न होकर जिस परिवेश में वह सांस लेता है उस बस्ती के लोगों को वास्तविकता से रुबरु कराकर उन्हें जागृत कर उनमें शिक्षा के बीज अंकुरित करना चाहता है। बस्तीवाले भी चंदन की इस सोंच में उसका साथ देते हैं। वे नहीं चाहते कि उनके बच्चे भी उनके जैसी जिन्दगी बसर करें। इसलिए चन्दन से कहते हैं-" नहीं बाबू हम हरगिज नहीं चाहते कि हमारे बच्चों का भी हमारी तरह अपमान हो, उन्हें भी शोषण और अन्यायपूर्ण जीवन जीना पडे। हम चाहते हैं वे मनुष्य की तरह जीए। जो यातनाएँ हमको सहनी पडी हैं वे उनसे मुक्त हो तथा समता और स्वाभिमान का जीवन जीए।"[2]

'छप्पर' उपन्यास के माध्यम से लेखक वैचारिक धरातल पर दलित समाज को संगठीत कर, शोषणवादी व्यवस्था से मुक्ति की मुहिम चलाने की प्रेरणा देता है।

दलित उपन्यासकारों में जयप्रकाश कर्दम,मधुकर सिंह, मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल सिंह, ओमप्रकाश वाल्मीकि, श्यौराजसिंह बेचैन, कंवल भारती, दयानंद बटोही आदि का नाम उल्लेखनीय है।

मोहनदास नैमिशराय के 'क्या तुम मुझे खरीदोगे?' 'मुक्ति पर्व', 'आज बाजार बंद है' और 'वीरांगना झलकारी बाई' बहुचर्चित उपन्यास हैं। 'क्या तुम मुझे खरीदोगे?' में दलित समाज की अत्यंत त्रासद एवं भयावह जीवन स्थितियों का जीवन चित्रण है। 'मुक्तिपर्व' दलित जीवन की संघर्ष गाथा है। इस उपन्यास में चमारों का शोषित जीवन, नवाबों की मनमानी, सवर्ण अध्यापकों की जातीयतापूर्ण मानसिकता हर पाठक को सोंचने पर विवश किये बिना नहीं रहेगा।

'आज बाजार बंद है' वेश्याओं के रुप में दलित स्त्रियों के दयनीय जीवन की दर्दभरी दास्तान प्रस्तुत करनेवाली एक और विशिष्ट कृति है। पार्वती, पूनम, शबनम, मुमतो, साधना आदि नारी पात्रों के जरिए नैमिशरायजी ने सफेदपोश वर्ग की तथाकथित सभ्यता पर की प्रश्नचिन्ह लगाये हैं।

श्री मधुकर सिंह इक्कीसवी सदी में लेखन से जुडकर अब तक दर्जनों दलित चेतना से संपन्न उपन्यासों की रचना की है उनमें प्रमुख हैं- 'सबसे बडा छल', 'जंगली सूअर', 'उत्तर गाथा', 'सुनो भाई साधो', 'बाजत अनहद ढोल'

उल्लेखनीय हैं। इन उपन्यासों में समाज के सदियों से सताए उपेक्षित, शोषित और दलित लोगों का जीवन अंकित है। सामाजिक जीवन की जडता,क्रूरता, अमानवीयता को रेखांकित करके के साथ ही दलितों में अपने हक के लिए संघर्ष करने और सबके जैसा जीवन जीने की भावना को भी प्रेरित किया है।

सत्यप्रकाशजी का उपन्यास 'जस तस भई सबेरे' में दलितों उनके हीन भावना का एहसास कराके अन्याय से लडने के लिए जोश भरने का काम किया गया है। प्रस्तुत उपन्यास में प्रमुख पात्रों में चौधरी देवीपाल सिंह, पंडित हर्षना, सुनहरी, रामवती, धुसिया चमारिन है। दलित स्त्री पात्र चौधरी देवीपाल सिंह के खेत में मजदूरी करने जाती है। जब सबके सामने ठाकुर धुसिया को अपने हवस का शिकार बनाता है और अन्य लडकियाँ इसलिए विरोध नहीं करती कि उसकी इज्जत बची रहे। इस तरह ठाकुर एक के बाद एक को अपने हवस का शिकार बनाता है। जब सबकी इज्जत लुट जाती है तो सब एक जुट होकर संगठन कर ठाकुर पर हमला बोल देते हैं पश्चात ठाकुर को अपने किये पर पछतावा होता है नतिजतन ठाकुर को इसका दण्ड भोगना पडता है।

मोहनदास नैमिशराय का 'वीरांगना झलकारी बाई' एक ऐतिहासिक उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास में झलकारीबाई को महिमा मंडित किया गया है, जो रानी लक्ष्मीबाई की सहेली थी, जो समर्पित होकर झाँसी की रक्षा में अंग्रेजों का सामना भी किया। झलकारी बाई दलित पिछडे समाज से थी और नि:स्वार्थ भाव से देश की सेवा में समर्पित रही।

इस प्रकार हम देखते हैं कि तत्कालीन परिवेश में हाशिए पर स्थित समाज जिन्हें सवर्णीय हिन्दू समाज अस्पृश्य मानकर पशुओं से गया गुजरा जीवन जीने के लिए बाध्य किया गया था वे लोग भी भारत के उस स्वतंत्रता संग्राम की लडाई में अपनी जान गंवाई थी।

अजय नावरिया कृत 'उधर के लोग' वर्ण व्यवस्था पर आधारित सामाजिक संरचना के यथार्थ को बयान करता है। वह सदियों से उपेक्षित, शोषित, दलित, जनसंख्या की ओर इंगित कर रहा है। दलित समाज में होनेवाले परिवर्तनों और अंतर्विरोधों को उपन्यास में मुख्य मुद्दा बनाया गया है।

भारतीय समाज में सवर्ण-दलित संघर्ष काफी अरसों से रहा आया है। आज केवल दलितों का संघर्ष केवल मात्र संघर्ष नहीं रहा बल्कि उसे डॉ.बाबासाहेब अंबेडकर के विचारों एवं भारतीय संविधान का आधार है। 'थमेगा नहीं विद्रोह' में हम देखते हैं कि दरियापूर के गुजर जाटवों के कुएं पर अपना अधिकार स्थापित करते हैं और वह भी लाठी के बल पर तब सारे जाटव जी जान से एक हो जाते हैं। उनमें अन्याय के खिलाफ लडने की चेतना जाग जाती है, जिससे वे विद्रोह करने के लिए तैयार है। जाटव केवल इतना कहते रहे थे कि हमार कुंआँ लेना है तो लीजिए पर हमे किसी और कुएँ से पानी तो भर लेने दीजिए। परंतु मस्ती में चूर गूजरों ने ऐसा करने से भी इंकार कर दिया। और तब कुएँ का यह जल जडवाडे में क्रांति का ईंधन सिद्ध हुआ।

गूजरों ने सोचा था कि जडवाडा उनकी बात मान लेगा। हमेशा ऐसा ही हुआ है। पर इस बार ऐसा नहीं हुआ। जाटव नहीं माने तो उन्होंने पहले जाटवों को धमकाया फिर लाठी चलाई, खून बहाया। फिर भी जाटव पीछे नहीं हटे। जाटव कितना कुछ सहते। उनके लिए कुआँ जीवन के समान था।

रांगेय राघव के 'कब तक पुकारुं' में दलितों पर हो रहे अत्याचारों का मार्मिक वर्णन मिलता है। उपन्यास में बखूबी दर्शाया गया है कि किस प्रकार द्विज लोगों ने दलितों की स्त्रियों का शील भगं करने के उपरांत उनका आर्थिक व मानसिक शोषण ब ही किया। उदाहरण के लिए-"धूपो को लेकर जो मारो ने दारोगा और उसके उन आदमियों से, जिन्होंने भूपो का सतीत्व नष्ट किया था, बदला लेना चाहा तो उस पर मनमाने अत्याचार ढोए गये। कंजेरा जेल भेज दिया गया। सारे चमारों की खेती काट ली गई।"

अत: निष्कर्षत: कहा जाय तो सामाजिक यथार्थ के संदर्भ में दलितों के जीवन में अनेक संघर्षों को हम देखते हैं। जन्माधारित स्थान निर्धारित इस समाज में उन्हें अनेक प्रकार की प्रताडनाओं को सहते गुजरना पडता है। उन्हें गाँव के कुएँ का पानी तक पीने अधिकार नहीं है। इस प्रकार की विषम व्यवस्था के मौजूद शोषण,सभ्य समाज की पशुता और हिंस प्रवृत्तियों के कारण दलित मनुष्य के भीतर अपने अधिकारों के प्रति सजगता की शक्ति उभरी है। जो दलित-चेतना के रुप में उभर कर आयी है।

दलित चेतना अस्सी और नब्बे के दशक में उभरा एक साहित्यिक आंदोलन है जो अपमान, शोषण और अपमान की प्रतिक्रिया की दर्दभरी और रोषपूर्ण अभिव्यक्ति है। इसमें सर्वाधिक बल सामाजिक विषमता की खाइयों को पाटने पर दिया जाता है। दलित का निर्मूलन ही दलित साहित्य का लक्ष्य है, इसलिए सर्वव्यापी क्रांति का अव्वाहन भी करता है। आधुनिक भारत की यह सबसे बडी विडंबना है कि लोकतांत्रिक विचारों और मूल्यों के प्रचार-प्रसार के बावजूद जातिगत भेदभाव जैसी भावनाएँ हमारे भारतीय समाज का अपरिहार्य अंग बनी हुई है। अत: कहा जाय तो नैतिकता का स्तर जब चरमराता है तब मानवीयता शर्मसार होती है तब दलित-साहित्यकार स्थापित परंपरा को नकारता है अपने निजी अनुभवों के आधारपर समाज को बदलने की कोशिश करता है।

संदर्भ/ सहायक ग्रन्थ:

1.जयप्रकाश कर्दम-छप्पर-पृ.सं-४०

2.जयप्रकाश कर्दम-छप्पर-पृ.सं-४५

3 समकालीन साहित्य और दलित विमर्श-सं.पुनम कुमारी

4 दलित साहित्य: चिन्तन के विविध आयाम-सं. डॉ.एन.सिंह.

5 दलित चेतना:साहित्य-रमणिका गुप्ता

6 दलित साहित्य के प्रतिमान-डॉ.एन.सिंह

****